International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

देबप्रसाद दास परंपरा में मूल ओडिसी का पुनरुत्थान

मोनिदीपा घोष[1], राजा रवि गौतम[2]

[1,2] शोधार्थी, दर्शन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

शोध सार-

ओडिसी नृत्य को जनसाधारण सामान्यतः हिन्दुस्तानी शास्त्रीय नृत्य के अंतर्गत जानता ही है, परंतु बहुत कम लोगों को इस नृत्य की विभिन्न शैलियों और परम्पराओं का ज्ञान है। विभिन्न गुरुओं द्वारा अलग-अलग शैली और कला के प्रयोग के कारण ओडिसी नृत्य में बहुत विविधताएं हैं, उन विविधताओं के आधार पर ओडिसी नृत्य की तीन प्रमुख परम्पराएं मानी गई हैं, नामतः गुरु पंकज चरण दास परंपरा, गुरु केलूचरण महापात्र परंपरा और गुरु देबप्रसाद दास परंपरा। इन तीनों परम्पराओं में गुरु केलूचरण महापात्र की शैली को ही जनसाधारण मूल-ओडिसी के रूप में पहचानती है और मान्यता देती है। वहीं गुरु देबप्रसाद दास परंपरा की नृत्य शैली अपनी कला, दर्शन और सभी रसों की यथोचित अभिव्यक्ति के कारण विद्रोही प्रकृति की है। क्योंकि गुरु केलूचरण महापात्र की परंपरा लोगों के बीच प्रचलित है और गुरु देबप्रसाद दास की नृत्य शैली इस प्रचलित परंपरा की विरोधी है इसलिए गुरु देबप्रसाद दास की नृत्य शैली को वह स्थान प्राप्त नहीं है जिसकी वह योग्यता रखती है। चूंकी गुरु देबप्रसाद दास को तंत्र और शैव परंपरा के प्रति गहरा लगाव और अनुराग था इसलिए उनकी शैली को शैव ओडिसी के नाम से जाना जाता है। इस शैली मे वीर रस और श्रृंगार रस के साथ-साथ उन रसों की विशेष महात्ता है जिन्हें साधारणतः उपेक्षित और अप्रिय प्रकृति का माना जाता है, यथा, रौद्र रस, विभात्स रस और भयानक रस। यह शैली तथाकथित अप्रिय रसों को उच्च स्थान प्रदान करती है और उन पर नृत्यरचना (choreography) करती है। इस लेख का उद्देश्य गुरु देबप्रसाद दास की नृत्य की क्रांतिकारी प्रकृति को अभिव्यक्त करते हुए तथाकथित अप्रिय रसों के साथ-साथ गुरु देबप्रसाद दास की कुछ प्रसिद्ध नृत्यरचनाओं का विश्लेषण करना है। यह लेख इस क्रांतिकारी, अद्वितीय और साहसी नृत्य शैली का शाब्दिक उत्सव है।

मूल शब्द- नाट्यशास्त्र, सौंदर्यशास्त्र, शैव ओडिसी, तंत्र, नृत्य-दर्शन

भूमिका -

ओडिशा में उत्पन्न भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैली ओडिसी की परंपरा और इतिहास की जड़ें नाट्यशास्त्र तक जाती हैं। नाट्यशास्त्र ओदरा मगध क्षेत्र और ओदरा मागधी नृत्य शैली का उल्लेख करती है, जो क्रमशः समकालीन ओडिशा और ओडिसी नृत्य का अग्रदूत है। भरत मुनी कृत नाट्यशास्त्र भारतीय सौंदर्यशास्त्र का आधार माना जाता है जिसका व्यापक प्रभाव पश्चिमी सौंदर्यशास्त्र पर भी है। रस-सिद्धांत नाट्यशास्त्र का प्रमुख सिद्धांत है और सौंदर्यशास्त्र में मुख्य चर्चा का विषय है।

गुरु देबप्रसाद दास की नृत्य शैली का विश्लेषण करने से पूर्व ओडिसी और इसकी विभिन्न परम्पराओं का परिचय आवश्यक है। देवदासी परंपरा की स्त्री विशेष नृत्य शैली से ओडिसी नृत्य की उत्पत्ति हुई है। मंदिरों में नियुक्त की गईं नर्तकियां देवदासी कही जाती थीं, वे नर्तकियां कुछ समय अंतराल के पश्चात् महारी के नाम से जानी गयीं। देवदासी परंपरा में 'नृत्त' की प्रधानता थी। कुछ समय बाद, इस नृत्य शैली को गोटिपुआ नर्तकों ने स्त्रीयों के वेषभूषा में अपनाया, जो की 'नृत्त' और 'नाट्य' से युक्त था (यह एक पुरुष विशेष नृत्य शैली थी)। इस प्रकार से, ओडिसी अपने विकास और प्रसिद्धि के पथ पर अग्रसर हुई। गोटिपुआ परंपरा ओडिसी नृत्य के सीमित संसार को मंदिर के चार दिवारी से आम दर्शकों तक ले गयी। धीरे-धीरे और नियमित ढंग से विकसित होकर यह नृत्य शैली अपने भव्य रूप को प्राप्त हुई, जो हमारे अनुभव के लिए आज के समय में उपलब्ध है। ओडिसी नृत्य-जगत में मध्य 1950 से तीन महत्वपूर्ण गुरुओं का आगमन हुआ जिनकी शैलीयों की विशिष्टता कालांतर में परंपरा बन गयीं, नामतः गुरु पंकज चरण दास शैली, गुरु केलूचरण महापात्र शैली और गुरु देबप्रसाद दास शैली।

आगे बढ़ने से पहले 'नृत्त', 'नाट्य' और 'नृत्य' के बीच अंतर समझना आवश्यक है। नाट्यशास्त्र, अभिनय दर्पण और संगीत रत्नाकर जैसे ग्रंथों में उपरोक्त पदों का उल्लेख मिलता है। ओडिसी नृत्य का एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ अभिनय दर्पण के अनुसार, 'नाट्य' नाटक के मूल विषय-वस्तु के साथ प्रयोग किया जाने वाला नृत्य है, रस और भाव से शुन्य नृत्य की शैली को 'नृत्त' कहते हैं तथा 'नृत्य' वह शैली है जिसमे रस, भाव और संकेत आदि निहित होते हैं"[i]।

ओडिसी नृत्य का एक पारंपरिक मंच-प्रदर्शन पांच भागों का सम्मिलित रूप है। यह पांच भाग निम्नलिखित हैं-

अ) मंगलाचरण - वह नृत्यरचना जिसमें किसी देवी या देवता की स्तुति और उनका निरूपण किया जाता है।

ब) स्थायी अथवा बट्टू नृत्य - इस नृत्यरचना में 'नृत्त' की प्रमुखता है; जिसमें शैली, पद क्रिया और विधि पर बल दिया जाता है।

स) पल्लवी- पुष्प के पल्लवित होने के रूपक के प्रयोग से पल्लवी नाम की उत्पत्ति हुई है। पल्लवित होने की अवधारणा इस नृत्यरचना में संगीत और पद-क्रिया की गति में धीरे-धीरे वृद्धि की ओर इंगित करती है, यह विलंबित लय से द्रुत लय की ओर की गति है। एक पूरी कृति के दौरान पद क्रिया उन्मुख नृत्यरचना जो केवल एक राग पर आधारित हो पल्लवी कहलाती है। और उसी राग के अनुसार प्रस्तुत कृति का नामकरण किया जाता है, जैसे मेघ पल्लवी राग मेघ पर आधारित है, बसंत पल्लवी राग बसंत पर आधारित है।

ड) अभिनय - यह अंश कथा प्रकट करती है। इसमें पद-क्रिया कि अपेक्षा भाव और नाट्य के अंग प्रबल रूप से उपस्थित हैं। यह प्रायः विलंबित या मध्य लय में होती है।

ई) मोक्ष- यह पद-क्रिया की प्रधानता युक्त द्रुत गति की कृति है। कृति के अंत में एक श्लोक को सम्मिलित किया जाता है जहाँ नर्तक-नर्तकियाँ देवी-देवताओं के श्रद्धा में नतमस्तक हो जाते हैं। यह कृति भारतीय परंपरा में उपलब्ध मुक्ति की अवधारणा का द्योतक है।

ओडिसी नृत्य की देबप्रसाद दास परंपरा को प्रारंभ से ही व्यवहार और विद्वत जनों की रूचि, दोनों दृष्टिकोण से दरकिनार किया जाता है। प्रस्तुत लेख में इस नृत्य की विशिष्टता का समुचित विश्लेषण किया गया है। इस लेख का विषय-वस्तु ओडिसी नृत्य की देबप्रसाद दास परंपरा में प्रयुक्त रस को प्राथमिकता देता है। यह लेख ओडिसी नृत्य की अद्वितीय और रमणीय परंपरा को सौंदर्यशास्त्र के क्षेत्र, निष्पादन कला (चमतवितउपदह ंतजे) और विद्वत परंपरा में सम्मिलित करने का प्रयत्न करता है।

नाट्यशास्त्र में अन्तर्निहित रस सिद्धांत का संक्षिप्त विवरण-

भरत ने सर्वप्रथम अपने सौंदर्यशास्त्र में रस पद की सटीक व्याख्या हेतु रस का मूल अर्थ- 'स्वाद' के रूपक का प्रयोग किया। केवल भक्षण करना स्वाद लेना नहीं कहा जा सकता। व्यक्ति की पूर्ण उपलब्धता ही भोजन के स्वाद का समुचित ज्ञान कराता ह,ै जबकि भोजन तो बेमन या हृदय लगाये बिना भी किया जा सकता है। उसी प्रकार, किसी भी कलाकृति के प्रभाव का नियामक दर्शक की उस कला के प्रति ग्रहणशीलता और तल्लीनता है।

किसी फल के रस के अर्थ में भी रस पद प्रयुक्त होता है, यद्यपि यहाँ पर फल और उसके रस की अनुरूपता का प्रयोग सीमित है, क्योंकि रस निष्कर्षण के पश्चात् फल का मूल भाग अनुपयोगी हो जाता है, वहीं दूसरी तरफ किसी भी कलाकृति में उसके कालातीत होने की संभावना प्रच्छन्न होती है।

दूसरी दृष्टि से देखा जाये तो, भोजन के स्वाद का रूपक भरत के रस-सिद्धांत से असंगत है, जैसे ब्लू चीज़, रेड वाइन, तीखी गंध वाले और कसैले खाद्य पदार्थ कुछ लोगों के लिए जठराग्नि बढ़ाने वाले हो सकते हैं किन्तु अधिकांश लोगों के लिए प्रस्तुत खाद्य पदार्थ अप्रिय और असहनीय हैं। जबकि भरत के अनुसार 'रस' रसिकों के लिए आनंद का शाश्वत स्रोत है। रस की व्याख्या "सौंदर्य कि दृष्टि से उत्कृष्ट, स्थायीभाव की प्रत्यक्ष और नितांत संतुष्टि के अनुभव के रूप में की जा सकती है।"[ii]

प्रख्यात रस सिद्धांत जिसका श्रेय भरत को जाता है -

विभावानुभावव्यभिचारीसंयोगादरसनिष्पत्तिः (नाट्यशास्त्र , VI. 32)

सूत्र के अनुसार रस 'विभाव', 'अनुभाव' और 'व्यभिचारिभाव' का समेकित परिणाम है।

यद्यपि विद्वत जनों को इस बात पर संशय हैं कि रस सूत्र भरत द्वारा प्रदत है अथवा उनसे पूर्व के आचार्यों द्वारा! साथ ही, नाट्यशास्त्र में यह स्पष्ट है कि स्थायीभाव को सम्पूर्ण सौन्दर्य-प्रबंध का आधार माना जाता है, हालांकि रस-सूत्र में इस बात का वर्णन नहीं मिलता। इन बातों से संदेह और भी बढ़ जाता है कि रस सूत्र उनकी सोच का परिणाम था अथवा उनके द्वारा केवल व्याख्या ही किया गया था।

भरत अग्रलिखित श्लोक में कुल आठ रसों का प्रतिपादन करते हैं-

तदेषं रसानामुत्पत्तिवर्णदैवतनिदर्शनान्यभिव्याख्यास्यामः। तेषामुत्पत्तिहेतवश्चत्वारो रसाः। तद्यथा.

शृङ्गारो रौद्रौ वीरो बीभत्स इति। अत्र - शृङ्गाराद्धि भवेद्धास्यो रौद्राच्च करुणो रसः।

वीराच्चैवाद्भुतोत्पत्तिर्बीभत्साच्च भयानकः (नाट्यशास्त्र, VI. 39)

भरत के अनुसार मूल रस चार हैं- श्रृंगार, रौद्र, वीर तथा बीभत्स। हास्य रस कि उत्पत्ति श्रृंगार रस से, करुण रस की उत्पत्ति रौद्र रस से, अद्भुत रस कि उत्पत्ति वीर रस से और भयानक रस की उत्पत्ति बीभत्स रस से होती है।

गुरु देबप्रसाद दास-एक क्रांतिकारी-

गुरु देबप्रसाद दास मूल ओडिसी नृत्य की शुद्धता के लिए आजीवन प्रयासरत रहे। मूल ओड़िया परंपरा के प्रति उनका अगाध प्रेम था। उन्होंने नृत्य कि संस्कृतनिष्ठ शैली (Sanskritised) का कड़ा प्रतिरोध किया। साथ ही, ओडिसी नृत्य की पारिभाषिक शब्दावली में शुद्ध ओड़िया शब्दों के प्रयोग को बढ़ावा दिया। उन्होंने भाव भंगिमा

तथा अंग संचालन को परिष्कृत करने के नाम पर आवश्यकता से अत्यधिक कटि संचालन, नितंब संचालन और धड़ संचालन का विरोध किया, क्योंकि उल्लेखित लक्षण ओडिसी की वास्तविक प्रकृति से सर्वथा अन्य इसे कामोद्दीपक प्रकृति का बना देती है। साथ ही, दास ने स्थानीय ओड़िया कवियों को प्रोत्साहित किया, उनमें उपेन्द्र भंज और बनमाली दास प्रमुख हैं। उन्होंने ओडिसी नृत्य के मूल भाव, शुद्धता और अनुभव को बनाये रखने के लिए ओड़िया भाषा के प्रयोग कि वकालत की।

उन्होंने अपने रंग-मंडली (repertoire) में तांडव अंग को सम्मिलित किया और इस प्रकार उनकी शैली को शैव परंपरा और शिव के गुणों का मूर्त अनुष्ठान माना जाता है, यदा-कदा इसे शैव ओडिसी के नाम से भी जाना जाता है। उनकी नृत्यरचनाएँ जैसे वेंकटमखिं द्वारा रचित अष्टशंभू, शिव मंगलाचरण जो कि गंगा तरंग के नाम से ख्यातिप्राप्त है; इन सब में शैव परंपरा और शिव के गुणों कि यथेष्ठ अभिव्यक्ति है।

दास की नृत्यरचनाओं से यह स्पष्ट है कि वह केवल शैव परंपरा से प्रभावित नहीं थे बल्कि उनपर तंत्र और शाक्त परंपरा का भी पर्याप्त प्रभाव था। यह तथ्य उनकी प्रसिद्द नृत्यरचनाओं- महाकाली ध्यान, दस महाविद्या, सप्तमात्रिका, आदि में दृष्टिगोचर होता है।

"गुरु देबप्रसाद दास ने, अपने गोटिपुआ रंग-मंडली में भाव भंगिमा एवं अंग-संचालन के साथ... स्त्रीयों की वेशभूषा में नृत्य करने वाले पुरुष नर्तकों कि परंपरा को अपनाया। तथापि, उनकी शैली अपने ओजपूर्ण और पुरुष गुणों की अधिकता के कारण भी विख्यात है।"[iii] गोटिपुआ रंग-मंडली का समावेशन और संवर्धन विशुद्धतावाद का सूचक होने के साथ-साथ पंद्रहवी शताब्दी में प्रचलित भक्ति आन्दोलन का संकेतक भी था। इन विशेषताओं के अंतर्निविष्ट करने से मुख्यतः रौद्र रस, बीभत्स रस और भयानक रस का प्रयोग सार्थकता से किया जा सका। इस प्रकार, उन्होंने परंपरागत, प्रभुत्व संपन्न, कामुकता प्रधान केलूचरण ओडिसी शैली की वर्जना और कड़ा विरोध किया।

गुरु देबप्रसाद दास द्वारा अप्रिय रसों का गौरवपूर्ण प्रयोग -

गुरु देबप्रसाद दास के नृत्य का विशिष्ट दर्शन, तंत्र के प्रति गहन रूचि और झुकाव एवं तथाकथित अप्रिय रसों का सार्थक प्रयोग उनकी निर्भीकता एवं नृत्य में नवीनता लाने के प्रयास का द्योतक है। रौद्र रस के साथ उनका लगाव उनके रंग-मंडली का मुख्य अवयव है परंतु उन्होंने श्रृंगार रस की कभी भी उपेक्षा नहीं की। उनकी नृत्यरचनाओं में श्रृंगार रस का भव्य चित्रण अष्टपदी में द्रष्टव्य है। अष्टपदी जयदेव द्वारा रचित गीत गोविन्दम् से लिया गया है जो राधा-कृष्ण रासलीला की सुघर अभिव्यक्ति है।

दास अपनी शिव मंगलाचरण की नृत्यरचना में प्रचलित ओडिसी नृत्य शैली, जिसमें मंगलाचरण मृदु प्रकृति का माना जाता है से पृथक, मंगलाचरण में तांडव अंग का समावेश करते हैं। यद्यपि दास कृति का आरंभ शिव के विविध विशेषताओं को मृदु एवं मंद प्रवाहमय गति से चित्रित करते हुए करते हैं, तत्पश्चात कृति को तीव्र गति एवं पद-क्रिया में प्रविष्ट कराते हैं। इस प्रकार, इस कृति में तांडव अंग के आरंभ से रौद्र रस अपने वास्तविक रूप में प्रकट होता है। उल्लेखित रस का स्थायीभाव क्रोध है। उनकी इस नृत्यरचना में न केवल नर्तक के भाव-भंगिमा अपितु संगीत और पद-क्रिया के सम्पूर्ण अनुभव के माध्यम से यह रस अपने परिपूर्णता को प्राप्त होता है।

गुरु देबप्रसाद दास की सर्वाधिक प्रसिद्द नृत्यरचना- दस महाविद्या तंत्र शास्त्र कि एक महत्वपूर्ण अवधारण है। इन महाविद्ययों के नाम शास्त्र में काली, तारा, षोडशी, भुवनेश्वरी, त्रिपुरभैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगलामुखी, मातंगी और कमलात्मिका उल्लेखित हैं। इस कृति में रौद्र रस का प्रयोग प्रचूरता से किया जाता है, क्योंकि दस महाविद्या परंपरा में कई देवियाँ उग्र प्रकृति की होती हैं। इनमें काली, त्रिपुरभैरवी और छिन्नमस्ता देवियाँ क्रोध की प्रचंडता में चित्रित की जाती हैं। इस कृति में पद-क्रिया त्वरित, दृढ़ और द्रुतगामी होती है तथा इसका संगीत-संयोजन निरुपित रस का संपूरक होता है।

दास वीर रस के मूर्त रूप में तारा, षोडशी और बगलामुखी देवियों को चित्रित करते हैं। देवी तारा और देवी धूमावती को निरूपित करते समय वह बीभत्स रस का भी प्रयोग करते हैं। पूर्व उल्लेखित कृतियों में देवियों का भयानक एवं उग्र चित्रण किया जाता है जो दर्शकों में जुगुप्सा एवं भय जगाने का सामथ्र्य रखती हैं। श्रृंगार एवं करुण रस के मूर्त रूप में भुवनेश्वरी, मातंगी और कमलात्मिका देवियों का निरूपण किया जाता है। दस महाविद्या की नृत्यरचना में वात्सल्य रस भी न्यून मात्र में उपस्थित रहता है।

तत्पश्चात, यह नृत्यरचना रस और भाव की एक सम्पूर्ण निधि में परिणत हो जाती है। दस महाविद्या का यह श्रेष्ठ रूप गुरु देबप्रसाद दास की दक्षता और रस-बोध का द्योतक है।

निष्कर्ष-

अतः, गुरु देबप्रसाद दास परंपरा को नृत्य की शुचिता एवं क्रांति का मूर्त उत्सव कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा। इस परंपरा की दृढ़, निर्भीक और अनूठी विशेषताओं को सार्वजनिक स्वीकृति के साथ-साथ नृत्य जगत में अंगीकार करना सौन्दर्य शास्त्र की उन्नति के लिए आवश्यक है। यहाँ दृढ़ता का तात्पर्य इस नृत्य परंपरा के प्रति श्रद्धा और इसकी क्रियात्मक पक्ष का शक्तिशाली और साहसी होने से है। यह घड़ी इस उत्कृष्ट नृत्य शैली के संरक्षण एवं उत्थान के लिए समर्पित होने की है, अन्यथा इस अमूल्य धरोहर के अनुभव से हमारी आनेवाली पीढ़ी वंचित रह जाएगी। गुरु केलूचरण महापात्र की परंपरागत और अवास्तविक या छद्म ओडिसी के विरूद्ध गुरु देबप्रसाद दास की क्रांति की मशाल को प्रज्वलित बनाए रखने का समय आ गया है।

एंडनोट-

[i] Nandikeśvara, The Mirror of Gesture: Being the Abhinaya Darpaṇa by Nandikeśvara, trans. Ananda Coomaraswamy and Gopala Kristnayya Duggirala, Cambridge Harvard University Press, London, 1917, 14.

[ii] Susheel Kumar Saxena, Aesthetics: Approaches, Concepts and Problems, Sangeet Natak Akademi, Delhi, 2010, 374.

[iii] Paromita Kar, The Debaprasad Das Tradition: Reconsidering The Narrative of Classical Indian Odissi Dance History, York University, Canada, 2013, 150.

संधर्ब सूची

1. बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, श्रीभारात्मुनिप्रनितं सचित्रम् नाट्यशास्त्रम्, चैखम्बा संस्कृत संसथान, वाराणसी, 1978
2. सुभद्रा चैधरी, शरंगादेवकृत संगीत रत्नाकर, राधा पब्लिकेशन, 2000
3. Adya Rangacharya, Introduction to Bharata's Nāṭya-Śāstra, Bombay Popular Prakashan, Bombay, 1966.
4. Kanti Chandra Pandey, Comparative Aesthetics Vol. I: Indian Aesthetics, The Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi, 1959.
5. Manomohan Ghosh, Nāṭyaśāstram, Chaukhamba Surbharti Prakashan, Varanasi, 1950.
6. Nandikeśvara, The Mirror of Gesture: Being the Abhinaya Darpaṇa by Nandikeśvara, Translated by Ananda Coomaraswamy and Gopala Kristnayya Duggirala, Cambridge Harvard University Press, London, 1917.
7. Paromita Kar, The Debaprasad Das Tradition: Reconsidering The Narrative of Classical Indian Odissi Dance History, York University, Canada, 2013.
8. Priyambada Mohanty - Hejmadi, The trinity of Odissi, Sangeet Natak: Journal of the Sangeet Natak Akademi (JSNA), no. 096 (April-June1990), 3-18.
9. Sarbeswar Satpathy, Dasa Mahavidya & Tantra Sastra, Saraswati Satpathy, Cuttack, 1985.
10. Susheel Kumar Saxena, Aesthetics: Approaches, Concepts and Problems, Sangeet Natak Akademi, Delhi, 2010.